युगद्रष्टा गुरूदेव रविन्द्र नाथ एवं उनकी साहित्य यात्रा (विशेष रूप से काव्य के संदर्भ में)

डॉ0 ज्योति सिनहा,
पूर्व फेलो,
भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान,
राष्ट्रपति निवास शिमला, हिमाचल प्रदेश

विश्व वांगमय में कवीन्द्र रविन्द्र को मूर्धन्य स्थान प्राप्त है। उनकी साहित्यिक कृतियों व रचनाओं में उनमें छिपी दैवीय सर्जनात्मक शक्ति का प्रतिफलन है जिसके प्रभाव से देश ही नही अपितु विश्व के जन प्रभावित हुये। उनकी ख्याति देश काल की परिधि से बाहर है। अनेक भाषाओं में इनकी कृतियों का अनुवाद हुआ है। रविन्द्र साहित्य के एक–एक विधा पर शोधरत शोधार्थियों ने शोध किया है। बंग्ला में भी नई–नई दृष्टियों से बहुत काम हुआ है। अब भी हो रहा है।

रविन्द्र नाथ जी ने बहुत लिखा है इसमें कविता है, उपन्यास है, कहानियाँ हैं, नाटक हैं, निबन्ध है, आलोचना है तथा साहित्य अपने व्यापक अर्थ में जो कुछ भी सूचित करता है उन सब पर उनका अबाध अधिकार था। अपनी साहित्यिक रचनाओं में सर्वत्र उन्होने सत्य पर विचार किया है – **''क्या जगत, क्या भौतिक जगत और क्या स्वदेश और क्या विदेश, सर्वत्र सत्याचरण को ही उन्नति और अभ्यूदय का मूल मंत्र समझना चाहिए।**[1] कवि ने अपने जीवन में भी और अपने ग्रंथो में भी इसी सत्य का जय–जयगान किया हैं ।

रवीन्द्र नाथ टैगोर का जन्म 7 मई 1861 को कलकत्ता के जोड़ासाकी मुहल्ले में हुआ था। उनके पिता का नाम महर्षि देवेन्द्र नाथ टैगोर था जो कलकत्ता के सम्पन्न एवं सम्मानित व्यक्ति थे। पारिवारिक पृष्ठभूमि के सम्बन्ध में कहा जाता है कि 17वीं शताब्दी के अन्तिम दिनों में पंचानन खुशारी नाम का एक ब्राह्मण व्यक्ति कलकत्ता के गोविन्दपुर गांव में आकर बस गया जो बंगाल के खुलना जिले का रहने वाला था। गांव के लोग उन्हें आदर से ठाकुर कहने लगे। अंग्रेजों के साथ वह व्यापार करने लगा। ठाकुर शब्द ही कालांतर में अंग्रेजी उच्चारन के कारन ' टैगोर' बन गया।[2] पंचानन के बेटे का नाम था द्वारिका नाथ टैगोर। पिता के व्यापार में द्वारिका नाथ ने पूरा सहयोग देते हुए व्यापार को ऊँचाई पर स्थापित किया। द्वारिका नाथ ठाकुर बड़े शान–शौकत से रहते थे तथा उन्हें प्रिंस कहा जाता था। वे एक व्यापारी के साथ–साथ सामाजिक कार्यकर्ता भी थे तथा कलकत्ता के शैक्षिक स्तर को ऊँचा उठाने में उन्होंने अपूर्व योगदान दिया। राजा राममोहन राय के साथ रहते हुए समाज सेवा में अपना योगदान दिया। द्वारिकानाथ ठाकुर के बड़े बेटे थे– देवेन्द्र नाथ टैगोर। इन्होंने भी पिता के व्यापार को आगे बढ़ाया परन्तु इनका जीवन सरल एवं गम्भीर था। इन्होंने आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को अपनाया। 1946 में द्वारिका नाथ ठाकुर की मृत्यु के पश्चात् ये ब्रह्म समाज में शामिल हो गये तथा धार्मिक आध्यात्मिक रूचि से लोग उन्हें महर्षि कहने लगे। देवेन्द्र नाथ ने शारदा देवी से विवाह किया तथा उनसे इन्हें चौदह सन्तान हुए। रविन्द्रनाथ देवेन्द्र नाथ के सबसे छोटे पुत्र थे।

यद्यपि कुल परिवार सम्पन्न एवं समृद्ध था परन्तु पारिवारिक माहौल अतयंत अनुशासित एवं मर्यादित था जिसका प्रभाव रविन्द्र नाथ पर भी पड़ा। घर के सभी सदस्य अध्ययनप्रिय एवं साहित्य व कला में अभिरूचि रखने वाले थे।

पारिवारिक माहौल सदैव शिक्षा के प्रति प्रेरित करने वाला था।

बचपन से ही रविन्द्र नाथ अत्यन्त जिज्ञासु प्रवृत्ति के थे। यदि किसी बात को जानने की जिज्ञासा उनमें होती तो वे उसे जान कर ही दम लेते थे। प्रकृति के रहस्यों को जानने की उनकी तीव्र ललक थी। अपनी आत्मकथा में अपनी उत्सुकता का वर्णन अनेक प्रसंगों पर किया है। पृथ्वी व आसमान के रहस्यों को जानने की बड़ी तीव्र इच्छा थी। आसमान नीला क्यों होता है? इसका किनारा कहां तक है? इत्यादि बातें इनके मन में कौंधती रहती थी। इन्हीं रहस्यों को जानने तथा सत्य तक पहुंचने की तीव्र उत्कंठा ने रविन्द्र नाथ को रहस्यवादी कवि बना दिया।

रविन्द्र नाथ की आत्मकथा को पढ़ने से एक बात सामने आती है कि वे शिक्षा के प्रति विशेष गम्भीर नहीं थे। प्राकृतिक सौन्दर्य उनका मन लुभाता था, चित्र उन्हें बहुत अच्छे लगते थे। संगीत की ध्वनि पर उनके पांव थिरकने लगते थे परन्तु पढ़ाई लिखाई उन्हें नीरस लगती थी। वे पढ़ाई से बचते थे और अलग जाकर बैठ जाया करते थे। अपनी इस आदत के बारे में उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है ––**"मौका मिलते ही मैं दूसरी मंजिल पर जाकर खिड़की में बैठ जाता था। और अपना वक्त बिताया करता था। मै यह गिना करता था कि एक साल बीत गया, दो साल बीत गये। तीन साल बीत गये। इस तरह गिनते–गिनते मैं सोचने लगता था– पता नहीं कितने साल अभी और बिताने पडेंगे इस नीरस पाठशाला में यहाँ, पता नहीं कब मुझे मुक्ति मिलेगी।"**[3]

तेज दिमाग, जिज्ञासु प्रवृत्ति तथा दैवीय प्रतिभा ने आगे चलकर रविन्द्र नाथ को गुरूदेव रविन्द्र नाथ टैगोर तथा कविन्द्र रविन्द्र जैसे नामो से सुशोभित किया।

मात्र 7 वर्ष की उम्र में रविन्द्र नाथ ने अंग्रेजी कवि हेमलेट की तर्ज दर बंग्ला में छंद कविता लिखा जो 'नेशनल पेपर' (सम्पादक–नवगोपाल मिश्र) के बाल कविताओं के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ। इस विलक्षण प्रतिभा से इनके पिता अतयन्त प्रसन्न हुए। रविन्द्र नाथ की लेखन प्रतिभा का विकास शनैः शनैः होने लगा। 16 वर्ष की आयु तक अनेक कवितायें लिख डाली। 1877 में जब बड़े भाई ज्योतिरिन्द्र नाथ ने 'भारती' नामक पत्रिका का प्रकाशन किया तो रविन्द्र नाथ को सम्पादक मंडल में रखा तथा रविन्द्र नाथ ने इसमें 'मेघनाथ वध' की समीक्षा लिखी जो लोगों में अत्यन्त सराहनीय रहा। यह इनका पहला गद्य लेख था। साथ ही इतने कम उम्र में पत्रिका का सम्पादन हैरान करने वाला था। हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला तथा संस्कृत इत्यादि अनेक भाषाओं का ज्ञान इन्हें था।

पिता ने रविन्द्र की बहुमुखी प्रतिभा को देखते–परखते हुए विलायत भेजकर पढ़ाने का निश्चय किया। बड़े बेटे सतेन्द्र नाथ जो कि अहमदाबाद में सिवील जज थे, उनके साथ रविन्द्र को इग्लैण्ड भेजा तथा वहाँ ब्राईटननगर में एक स्कूल में नाम लिखा दिया। कुछ दिनों पश्चात लन्दन के स्कूल में दाखिला कराया। पढ़ाई के दौरान अंग्रेजी साहित्य ने रविन्द्रनाथ को विशेष रूप से प्रेरित किया।

पश्चिमी संस्कृति, खुला व्यवहार एवं पाश्चात्य संगीत ने रविन्द्र नाथ के युवा मन को प्रभावित करने के साथ ही उनकी सृजन प्रतिमा को भी मुखरित एवं उत्सर्जित किया। उन्होंने प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रेरित होकर अतयंत सुन्दर कविता की रचना की जिसका शीर्षक था– महनतरी। इसके पश्चात् कविता के रूप में एक नाटक लिखा जिसका नाम था– 'भग्न हृदय'। चार हजार पक्तियों वाला यह नाटक शुद्धतः प्रेमकथा पर आधारित था। इसके पश्चात् बाल्मीकी प्रतिभा नाटक लिखा तथा मंचन भी किया जिसे साहित्य प्रेमियों ने सराहा। कविता से रविन्द्र को विशेष लगाव था। इनकी लिखी

कवितायें सोहय गीत, प्रभात गीत तथा हृदय व्रत इत्यादि शीर्षकों से प्रकाशित हुई। इनकी कविताओं में प्राकृतिक सौन्दर्य जैसे नदी, सागर, चाँदनी रात, गंगा तथा प्रकृति की गोद में बिखरे सौन्दर्य का हृदयस्पर्शी वर्णन मिलता है। बाद में रविन्द्र नाथ ने अनेक गीतों एवं रागों की रचना की। दिसम्बर 1884 में 22 वर्ष की उम्र में रविन्द्र नाथ का विवाह मृणालिनी देवी से हुआ।

साहित्य के अन्तर्गत काव्य की ओर देखें तो हम पाते हैं कि रविन्द्रनाथ ने अपने साहित्य यात्रा के प्रथम पर्व अर्थात् काव्य का आरम्भ 'संध्या संगीत' (ई0 सं0 1882 जुलाई) से माना है क्योंकि विश्व भारती से जब रविन्द्र रचनावली' प्रकाशित होने लगी तब सन्ध्या संगीत से पूर्व के ग्रंथों को इसमे ंनही रखा जबकि इससे पूर्व भी उन्होंने काफी कुछ लिखा जिसे विश्वभारती ने 'रविन्द्र रचनावली' अचलित संग्रह' नाम से छापा है।[4] 1890 ई0 सं0 में उन्होंने 'मानसी' लिखा जिसने उन्हें कवि के रूप में प्रतिष्ठित किया। परन्तु इसके बाद लिखे गये 'सोनार तरी' ने इनके पाठकों व प्रशंसको को आकर्षिक किया तथा साहित्य जगत में उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित किया।

जिन कविताओं को रविन्द्र रचनावली संग्रह में रखा गया उनमें – कवि काहिनी, बनफूल, भग्न–हृदय, रूद्रचंड, शैशव संगीत, इत्यादि प्रमुख है। बनफूल में आठ सर्ग है। कवि काहिनी में चार सर्ग हैं। भग्न हृदय और शैशव संगीत भी (इसवी संवत 1884) में लिखी गई। ये सभी कविताएँ कम उम्र में लिखी गयी छोटी–छोटी प्रेमगाथायें, रीति कविताये ंतथा गान है। भग्न हृदय चौबीस सर्गो में लिखा रवीन्द्र काव्य का सबसे बड़ा गाथा काव्य है। 'रूद्र चण्ड' (ई0 सं0 1881) भी गाथा या कथा काव्य है। यह रविन्द्र नाथ का आखिरी कथा काव्य है।

संध्या संगीत के पश्चात् ''भानू सिंह ठाकुरेर पदावली'' ई0 सं0 1884 के प्रकाशित हुआ। यह ग्रंथ कृष्ण भक्त कवियों की पदावली के आधार पर लिखा गया है।

'प्रभात संगीत' की रचना रविन्द्र नाथ ने ई0 सं0 1883 के करीब की। प्रभात संगीत की रचनाओं में रविन्द्र नाथ की जीवन के प्रति दृष्टिकोण दिखाई देता है। अनुभव व परिपक्वता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। इस समय वे चिन्तनमनन करना आरम्भ कर दिये थे। जीवन–मरण की अनन्तता को स्वीकार करते थे। अनन्त जीवन, अनन्त मरण, प्रतिध्वनि इत्यादि के बारे में रविन्द्र नाथ ने लिखा। प्रभात संगीत में प्रतिध्वनी नाम की एक कविता भी है। इसके अतिरिक्त 'निर्झरेर स्वप्नभंग' तथा 'सृष्टि स्थिति प्रलय' लम्बी कवितायें हैं। संसार में सब कुछ प्रतिध्वनिमय है। प्रतिध्वनिमय की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

'संगीत सौरभ, शोभा, जगते
या किछू आछे
कवि हेथा प्रतिध्वनीमय'

(प्रभात संगीत –प्रतिध्वनि)[5]

प्रतिध्वनि के संदर्भ में रविन्द्र नाथ की यह भावना कि–

''जो सुर असीम से बाहर हो सीमा की ओर आ रहा है वही सत्य, वही मंगल है। .... उसी की जो प्रति ध्वनि सीमा से असीम की ओर पुनः लौट जा रही है, वही सौन्दर्य है, वही आनन्द है''[6]

प्रभात संगीत को समग्र रविन्द्र काव्य दर्शन की आधारभूमि माना जा सकता है। प्रथमतः कवि व्यक्तित्व की झलक इसमें देखी जा सकती है। इसके पश्चात् ''छवि ओ गान'' की रचना सम्भवतः ई0 सं0 1884 में की। इस रचना में ऐन्द्रिकता है, स्वप्न है, कल्पना है। सामान्य जनजीवन के प्रति आकर्षण इस काव्य रचना में प्रवेश पाया दिखता

है। भाषा व छन्द का मेल छवि ओ गान में दिखाई देता है।

रविन्द्र नाथ जी को वर्षा ऋतु अत्यन्त प्रिय था और अपनी इस ऋतुप्रियता का वर्णन अपने काव्यों में भी किया है। 'छवि ओ गान' में भी 'बादल' नाम की एक कविता है जिसमें नानाविध वर्णन है। इसके पश्चात् 'कड़ि ओं कोमल' (ई0 सं0 1886) की रचना की। 'कड़ि ओं कोमल' की रचनाकाल को शरत् काल माना गया है। रविन्द्र काव्य में भाषा, भाव, छंद की स्वच्छता, प्रसन्नता इसी समय आरम्भ होती है। इन रचनाओं के काल में रवीन्द्र नाथ ने पहली बार अपने भीतर के, अपने अन्तस्तल के भावों–विचारों के आवेश को अपनी भाषा में, अपने छंद में, अपनी अभिव्यक्ति भंगिमा में निःसंकोच स्वच्छन्दतापूर्वक प्रगट किया।

रविन्द्र काव्य धारा की एक तरंग राष्ट्रीयता भी है। 'कड़ि ओ कोमल' में इस भाव की रचनाओं का भी सुस्पष्ट आरम्भ हुआ। देश की पराधीन स्थिति, देशवासियों की दीन–हीन दशा से वे व्यथित थे। वेदना से पीड़ित थे और यही अभिव्यक्ति उनकी 'बंगभूमिर प्रति' 'बंगवासीर प्रति' तथा 'आह्वान गीत' इत्यादि के माध्यम से हुई।

रविन्द्रनाथ की महत्वपूर्ण रचना रही 'मानसी' जो ई0 सं0 1890 में लिखी गई और जिसने बंगला काव्य क्षेत्र में रविन्द्रनाथ को व्यापक मान्यता दिलाई। **"जगत के सुख–दुख का नाना तरह का कोलाहल व्याकुल कर डालता है, वाणी नही दे पाते, इसलिए नाना दुश्चिंता घेरती है। जीवन भर यही चल रहा है जैसे और कोई काम ही न हो "।** इसी तरह का भाव रविन्द्र जी के मन में चल रहा था उस समय, जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने मानसी में की है। 'मानसी' के 'उपहार' के आरम्भ में रविन्द्र नाथ ने यह सब अभिव्यक्त किया है यथा–

"एचिर जीवन ताई, आर किछु काज नाई,
रचि शुधु असीमे सीमा।
आशा दिये, भाषा दिये, ताहे भालोवासा दिये,
गड़ेलि मानसी प्रतिमा।"
(मानसी–उपहार[7])

मानसी की कुछ कविताओं में प्रेम व प्रेमगत विरह की वेदना का भी वर्णन है तथा 'निष्फल कामना' व 'दुरंत आशा' कवितायें इस श्रेणी में आती हैं। साथ ही देश, जाति, राष्ट्रीयता की भावना की अभिव्यक्ति भी कुछ कविताओं में हुई है जिनमें 'बंगवीर', 'देशेर उन्नति', 'धर्म–प्रचार' इत्यादि कवितायें इसी देशगत्, समाजगत भावना से पूरित है।

रविन्द्र काव्य में 'मानसी' का स्थान अतयंत महत्वपूर्ण है। मानसी में रविन्द्र नाथ की छवि, कवि के साथ ही एक शिल्पी व कलाकार के रूप में भी अंकित हुई है। कवि के रूप में प्रतिष्ठा व प्रशंसा दिलाने में 'मानसी' की भूमिका वर्णनीय है।

मानसी के पश्चात् रविन्द्र नाथ जी की महत्वपूर्ण रचना प्रकाशित हुई जिसका नाम था– 'सोनार तरी'। यह ग्रंथ ई0 सं0 1893 में प्रकाशित हुआ।

'सोनार तरी' की रचना रविन्द्रनाथ ने उस समय की जब वे बंग प्रदेश की पद्या नदी के तट पर निवास कर रहे थे। अपने निवास काल के दौरान उन्होंने प्रकृति व मानव के नाना रूपों को पास से जाना–पहचाना एवं समझा। "सोनार तरी' ग्रंथ में प्रथम कविता 'सोनार तरी' नाम से ही है। बंग प्रदेश में किसान के लिए धान सोने के समान होता है। इस कविता में सोने वाले धान की अर्थात् मूल्यवान धान से भरी नौका का वर्णन है। रविन्द्रनाथ माँझी को पुकार कर कहते हैं कि किनारे आकर मेरे सोने के धानो को ले जाओ। इसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार है–

''शुधु तुमी निये याओ
क्षणिक हेसे
आभार सोनार धान कूलेते ऐसे।''

(सोनार तरी–सोनार तरी)

'सोनार तरी' की अन्य कविताओं में – अनादृत, नदी पथे, झूलन देउल, मानस सुन्दरी, हृदय यमुना, व्यर्थ–यौवन, भरा बादरे, अचल स्मृति, प्रतीक्षा, निरूद्देश्य यात्रा, शैशव संध्या, आकाशेर चाँद, ऐते नाहि दिब, समुद्रेर प्रति तथा वसुन्धरा। आत्म बोध व विश्वबोध की भावना से भरी ये कवितायें हैं। इस ग्रंथ से ही रविन्द्र नाथ के काव्य में रूपक और प्रतीकवाद के व्यवहार ने व्यापकता व बाहुल्य ग्रहण किया है।

'सोनार तरी' की रचना काल में रविन्द्रनाथ का रूप भावनापुरुष व कर्म पुरुष के रूप में उभर कर आया है। वे जो भी कविता लिखते थे, विचार व भावना जो भी रहती थी, परिवेश व काल जो भी रहता, पर समाज के प्रति मानवता के प्रति, उनकी सजगता उनके काव्य में अवश्य रहती थी। कुछ कविताओं में रविन्द्र नाथ जी ने अपने को, अपनी धारणाओं, भावनाओं व आकाक्षाओं को खुले तौर से व्यक्त किया है। इन विशेष प्रकार की कविताओं में वर्षायापन, विश्व नृत्य, पुरस्कार व आठ चर्तुदशपदिया– मायावाद, खेला, बंधन, गति, मुक्ति, अक्ष्मा, द्ररिद्रा, आत्म समर्पण प्रमुख है।

कुछ कवितायें प्रेमभावनामयी है जिसमें तोमरा ओ आमरा, सोनार कांकणा, व्यर्थ यौवन, लज्जा आदि महत्वपूर्ण है।

इसके पश्चात् 'चित्रा' ग्रंथ का प्रकाशन ई0 सं0 1896 में हुआ। रविन्द्र नाथ को अपने जीवन में प्रकृति व अलौकिक सत्ता को लेकर जो आध्यात्मिक आत्म बोध हुआ। उसकी अभिव्यक्ति उनकी कविताओं में हुई है। उनका यह व्यक्तित्व किसी अलौकिक सत्ता से ही संचालित है। इस ग्रंथ में ऐसे ही बोधो को काव्यात्मक रूप में उकेरा है। ''जीवन' देवता' व 'अर्न्तयामी' कविताओं में भी इसी बोध की झलक मिलती है। 'जीवन–देवता' में दार्शनिक आधार की नाना व्याख्यायें की गयी है। जीवन–देवता में वैष्णव दर्शन का द्वैतवाद भी है और वेदांत का अद्वैतवाद भी हैं। 'चित्रा ग्रंथ' के इन दोनो कविताओं में अध्यात्म की झलक मिलती है। इसके अतिरिक्त– आवेदन, शेष उपहार, नीरव तंत्री, सिंधु पारे इत्यादि कवितायें भी इसी श्रेणी की हैं। जगत् जीवन को आकर्षित करने वाली कविताओं में – ए बार फिराओं मोरे, मृत्यूर परे, साधना, शीते ओ बसंते, 1400 साल, नगर संगीत, मरीचिका, दुरांकाक्षा इत्यादि प्रमुख है।

कुछ कवितायें रविन्द्र नाथ के अन्तर के प्रेम और सौदर्य की कल्पना उदात्त रूप लेकर अभिव्यक्त हुई है। इस भाव से भरी कविताओं में प्रमुख रूप से – सुख, ज्योत्सना रात्रे, संध्या, पूर्णिमा, दिन शेषे, विजयिनी, प्रस्तरमूर्ति, नारेर दान, इत्यादि विशेष उल्लेखनीय है। 'उर्वशी' कविता रविन्द्रनाथ की महत्वपूर्ण है। 'उर्वशी' केवल रुपसी सुन्दरी (नारी) है, न माँ है, न कन्या है, न बधू है। सम्पूर्ण सौन्दर्य की अभिव्यक्ति नारी में है और नारी में सौन्दर्य का जो प्रकाश है, 'उर्वशी' उसी का प्रतीक है।

चित्रा के वाद प्रकाशन हुआ 'चैतालि' का (ई0 सं0 1896 में) चैत महीने में लिखे जाने के कारण मूल रूप से इस ग्रंथ का नाम 'चैतालि' रखा गया। कुछ गीतिकाव्य की रचनायें इसमें है। ग्राम जीवन की झांकी इन कविताओं में देखने को मिलती है। दुःखी दरिद्र जीवन की जो वेदना है उसकी अभिव्यक्ति चैतालि में हुई है।

चैतालि के बाद ई0 सं0 1899 में 'कणिका' प्रकाशित हुआ, 1900 में 'काहिनी और कथा' तथा रविन्द्र रचनावली खण्ड़ 6 भी प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त ई0 सं0 1900 में रविन्द्रनाथ के दो अन्य काव्य ग्रंथ प्रकाशित हुए

– कल्पना व क्षणिका। इस प्रकार चार काव्यग्रंथ प्रकाशित हुए। कल्पना में कुछ गान भी है। ये प्रसिद्धगान है और रविन्द्रनाथ द्वारा दिये गये सुरों में 'रविन्द्र संगीत' के नाम से अब भी गाये जाते है। अपने जन्म दिन को दृष्टिगत रखते हुए 'जन्मदिनेरगान' नाम से प्रार्थना गान की रचना की। इसके अतिरिक्त 'अशेष', 'वर्षशेष' 'वैसाख', उद्बोधन, 'उत्सर्ग' आदि कवितायें उल्लेखनीय रही है।

गीति काव्यात्मक गति में लिखी क्षणिका, रविन्द्रनाथ की प्रिय काव्य थी। इसमें सरल भाषा, सरल छंद में अपने सहज भावों को निरंलकृत रुप में अभिव्यक्त किया है।

'क्षणिका' के बाद का काव्यग्रंथ 'नैवेद्य' है जो ई0 सं0 1901 में लिखा गया है और रविन्द्र काव्य के प्रसिद्ध काव्य–ग्रंथों में से एक है। यह भक्तिपरक काव्य हैं, कुछ गान भी है। इसमें कर्म–भक्ति व मुक्ति इन तीन तत्वों के सुर विद्यमान है। 'नैवेद्य' अपने आराध्य, इष्टदेव के लिए है।

ई0 सं0 1903 में रविन्द्र ने 'शिशु' काव्य ग्रंथ की रचना की। 'शिशु' की कविताओं को बाल साहित्य के अर्न्तगत रखा गया है। यद्यपि पूर्व की अन्य अनेक काव्य–ग्रंथो में भी बाल कवितायें है, परन्तु दोनो कविताओं में फर्क है। इसमें शिशु की अपनी मानसिकता, सरलता–सहजता, स्वभाव, लीला, कल्पना, इत्यादि रूप मुखरित है।

'शिशु' के पश्चात् 'उत्सर्ग' की रचना मानी जाती है। यह भी नैवेद्य की तरह भक्तिमय है। भक्ति और आध्यात्म का रूप इसमें दिखता है। 1906 में प्रकाशित हुआ काव्य ग्रंथ 'खेया' जिसे रवीन्द्र जी ने प्रतीक रूप में लिया है– भवसागर से पार कराने का। इसमें रविन्द्र जीवन का दार्शनिक तत्व छुपा हुआ है। रविन्द्र नाथ के लिए अध्यात्म, दर्शन, जीवन दर्शन उनके काव्य अथवा कवि रूप का ही अंग है। सुख–दुःख, आशा–निराशा, जीवन–मृत्यु का भाव ही खेया, की कविताओं का आधार है। 'खेया के अर्न्तगत' ''आगमन' 'दान', 'घाटेर पथ', 'विदाय', 'शुभक्षण' 'दिधि' जैसी कवितओं में रहस्यात्मक स्पर्श भी दिखता है।

''खेया रविन्द्रनाथ के विशिष्ट काव्य ग्रंथों में से एक है। खेया के बाद ई0 सं0 1910 में रविन्द्र जी के जीवन का तथा संपूर्ण विश्व के साहित्य जगत् का लोकप्रिय ग्रंथ 'गीताजलि' प्रकाशित हुआ। 'गीतांजलि' में 157 रचनायें हैं। दो रचनायें 106 तथा 108 बड़ी है बाकी अन्य छोटी रचनायें हैं। गीतांजलि की रचनाओं में काव्य गुण भी है और गीति गुण भी। रविन्द्र नाथ जी ने अवसरानुसार इस ग्रंथ की छोटी–बड़ी सभी रचनाओं को सुर दिया है तथा रवीन्द्र संगीत के अन्तर्गत इसकी सभी रचनायें गाई जाती है।[8]

रविन्द्र काव्य रचना की दो धाराओं कविता और गान में, गान को सुर देकर उसे संगीतमय कर दिया है। गानों के माध्यम से उन्होंने स्वयं को अधिक मुखर रूप में प्रस्तुत किया है, व्यक्त किया है। 'गीतांजलि' की कुछ पंक्तियाँ ये हैं–

''गान दिये ये तोमाय खुँजी

बाहर मने

चिरदिवस मोर जीवने''

(गीतांजलि–132)

अर्थात **''अपने जीवन में मै तो गान के माध्यम से चिर दिन तुम्हें अपने भीतर और बाहर ही दूढ़ता हूँ।''[9]**

रविन्द्र संगीत उनके जीवन काल में ही चारों ओर व्याप्ति और प्रसिद्धि पा चुका था। यह गान स्वदेशी आन्दोलन के समय राष्ट्रीय चेतना जागृत करने में अत्यधिक प्रभावी हुई थी तथा उस समय यह बहुत प्रचलित हुआ। 'गीतिमाल्य' रचना में भी यही भाव रहा जो गीताजंलि के बाद

प्रकाशित हुयी। गीताजंलि गीतों की अंजली हैं और गान रविन्द्र नाथ के आत्म प्रकाश का सरल सहज साधन है। 'नैवेद्य' के समान गीताजंलि में भी भक्ति की प्रधानता है परन्तु गीताजंलि की भक्ति का स्वरूप भिन्न है। इसकी भक्ति आनन्दमय आराध्य के प्रति है जो नानारूपों व कर्मो में इस जगत् में परिव्याप्त है। 'गीतिमाल्य' के साथ ही 'गीतालि' भी प्रकाशित हुआ। ई0 सं0 1914 जुलाई में प्रकाशित गीति काव्य 'गीतिमाल्य' भी आराध्य के लिए ही है। 1914 में 'गीतालि' ग्रंथ प्रकाशित हुआ। 'गीतिमाल्य' की ही भाँति 'गीतालि' में भी अपने आराध्य से आवेदन निवदेन का भाव नीहित है। इसमें 108 रचनायें हैं। मध्ययुगीन रहस्यवादी कवियों का प्रभाव रविन्द्र नाथ पर पड़ा जिसकी छाया इन तीनों ग्रंथों पर दिखाई देती है। रविन्द्र नाथ की गान कविताओं में गान यानि संगीत और काव्य का अनुपम समन्वय देखने को मिलता है।

ई0 सं0 1916 में 'बलाका' रचना भी प्रकाशित हुई। 'बलाका' में रविन्द्रनाथ की बाह्यनिष्ठा उद्घृत हुई है। 1913 में नोबल पुरस्कार मिलने के बाद रविन्द्र नाथ की छवि देश की परिधि से बाहर विदेश तक जा पहुँची है। उनके चिंतन का क्षेत्र भी व्यापक हो गया। 'बलाका' की रचना प्रथम विश्वयुद्ध के समय हुई। अतः बलाका में रविन्द्रनाथ की मानव के प्रति जो वेदना, चिन्ता है, वह व्यक्त हुई है। बलाका में 22 संख्यक कविता है। यह पहले 'मुक्ति' नाम से छपी थी। 'बलाका' में ही 'शा—जाहान' (7) और 'ताजमहल' (9) नाम की रविन्द्रनाथ की ख्यातिलब्ध कवितायें हैं। बलाका में कुल 45 कवितायें हैं। भाव की गहनता गम्भीरता, भाषा और अभिव्यक्ति का वैचित्र्यगत वैभव बलाका की प्रत्येक कविता में उपलब्ध है। इसके बाद ई0 सं0 1918 में 'पलातका' प्रकाशित हुई जिसका प्रधान आलम्बन अथवा आधार 'आवागमन' का है। इसकी दो रचनायें 'शेषगान' व 'शेष प्रतिष्ठा' विशेष उल्लेखनीय हैं।

ई0 सं0 1922 में 'शिशु भोलानाथ' प्रकाशित हुआ। ई0 सं0 1925 में महत्वपूर्ण ग्रंथ 'पुरबी' का प्रकाशन हुआ। इस ग्रंथ की आधी से अधिक रचनायें यूरोप, अमेरिका के भ्रमण में दौर में लिखी गई। इस ग्रंथ के दो अंग है — पूरबी और पथिक। पूरबी में ई0 सं0 1917 से 1923 तक की रचित कवितायें हैं तथा 'पथिक' में 1924 की रची कवितायें हैं। 'पूरबी' में नाना विषयों को लेकर लिखि कवितायें हैं। 'पथिक' की कवितायें मार्मिक हैं। अन्य कविताओं में 'सावित्री' आशंका, विपाशा शेष बसंत, लिपी इत्यादि महत्वपूर्ण हैं।

ई0 सं0 1927 में 'लेखन' का प्रकाशन हुआ जो बंगला एवं रोमन लिपि में लिखा, छोटी—छोटी कविताओं का संकलन है। लेखन के पश्चात ई0सं0 1929 में प्रकाशित हुआ 'महुया'। इस ग्रंथ की अधिकांश कविताओं का विषय प्रेम है। ग्रंथ का 'महुया' नाम भी प्रेमभावविष्ट कविताओं के कारण है। कुछ कवितायें ऋतु उत्सव की भी है। महुया में 'नाम्नी' शीर्षक के अर्न्तगत 17 कवितायें हैं। इन 17 कविताओं में 17 तरह की नारी प्रकृति का विवरण है तथा प्रकृति के अनुरूप ही नाम दिया गया है यथा— काकली, नागरी, मूरति, करूणी, उषसि इत्यादि। महुया के पश्चात् 1931 में 'वनवाणी' प्रकाशित हुआ जिसकी प्रथम कविता 'वृक्षवंदना' है। वृक्ष से सम्बन्धित कवितायें इस ग्रंथ में हैं। शान्ति निकेतन के कुछ वृक्षों पर भी कवितायें हैं। इं0 सं0 1932 में 'परिशेष' प्रकाशित हुआ।

'परिशेष' की प्रणाम, अबुझमन, लक्ष्यशून्य, नूतनकाल इत्यादि कवितायें महत्वपूर्ण है। ई0 सं0 1932 में ही 'पुनश्च' प्रकाशित हुआ। 'पुनश्च' में रविन्द्र नाथ ने एक नव प्रयोग किया, गद्य कविता के रूप में। भाषा सरल है तथा यदा—कदा अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। 'छेलेटा' शेषचिठि, मानव पुत्र 'शिशुपुत्र', 'शाप मोचन' इत्यादि पुनश्च की विशिष्ट कवितायें हैं।

ई0 सं0 1933 में 'विचित्रता' प्रकाशित हुयी। इस ग्रंथ में इकतिस कवितायें हैं जो विभिन्न चित्रकारों के इक्तीस चित्रों पर आधारित हैं। इनमें सात चित्र स्वयं रविन्द्र नाथ जी के हैं। ''पुनश्च की तरह गद्य कविताओं का अगला ग्रंथ 'शेष सप्तक' ई0 सं0 1935 में प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ की कवितायें मुख्य रूप से प्रकृति, अतीत स्मृति और निर्लिप्त आत्मसत्ता बोध से सम्बन्धित है। कुछ कवितायें पत्र शैली में भी हैं। इसी समय एक अन्य ग्रंथ 'वीथिका' का प्रकाशन हुआ। यह पद्धबद्ध कविता हैं। कविताओं के अतिरिक्त चार गान भी है। प्रतीक्षा, बादल संध्या, बादल रात्रि, अभ्यागत।

ई0 सं0 1936 में 'पत्रपुट' प्रकाशित हुआ। इसमें गद्यकवितायें संगृहीत है। इसी समय 'श्यामली' ग्रंथ का प्रकाशन हुआ तथा इसकी संभाषण, अमृत, दुर्बोध, वंचित इत्यादि कवितायें महत्वपूर्ण हैं। 1937 में ही 'छापछाड़ा' और 'छड़ार छवि' प्रकाशित हुयी। विशेष रूप से बच्चों के लिये हास्य–व्यंग्य से पूरित कवितायें इस ग्रंथ में हैं। 'छड़ार छवि' की ज्यादातर कविताओं में कथा सूत्र का स्पर्श है। अल्मोड़ा में लिखे गये इन कविताओं में रविन्द्र जी ने अतीत स्मृति का संचरण किया है। ई0 सं0 1938 में 'प्रांतिक' काव्य ग्रंथ प्रकाशित हुआ जिसमें 18 कवितायें हैं। इस वर्ष में रविन्द्रनाथ जी कठिन रोग से पीड़ित हुए थे और रूग्णावस्था में उन्हें मृत्यु की अनुभूति हुयी थी, इसी अनुभूति की अभिव्यक्ति इन कविताओं में हैं।

इसके पश्चात् 1938 में ही 'सेंजुति' ग्रंथ प्रकाशित हुआ। इसमें 'पत्रोत्तर', 'जन्मदिन', चलति छवि, इत्यादि कवितायें विशेष है।

ई0 सं0 1939 में दो काव्य ग्रंथ प्रकाशित हुये– प्रहासिनी एवं आकाश प्रदीप

इन रचनाओं का मूल विषय भी अतीत स्मृति का संचरण है। आकाश प्रदीप की दो रचनायें 'मयूर दृष्टि' व 'कांचा' आम गद्य कवितायें हैं। इसके अलावा जाना–अजाना, समयहारा, छेले बेला कवितायें भी महत्वपूर्ण है।

ई0सं0 1940 में अगला ग्रंथ 'नवजातक' प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ की अनेक कविताओं में रविन्द्रनाथ ने आधुनिक अथवा वर्तमान युग में मानव के नानाविध कष्टों, दुःखों और इनके कारणों को लेकर अपनी व्यथा को व्यक्त किया है। कुछ कविताओं में इस संसार से आने जाने अर्थात् 'आवागमन' का भाव अंकित किया है। उद्बोधन, शेषकथा, शेषदृष्टि, संध्या, शेषबेला, जन्मदिन इत्यादि कवितायें महत्वपूर्ण हैं। इसी सन् में 'सानाई' ग्रंथ प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ की कविताओं को रविन्द्र नाथ जी ने सुर दिया है। रविन्द्र संगीत के रूप में ये आज भी गाई जाती है। 'रोगशय्याय' भी इसी समय में प्रकाशित हुआ। इस ग्रंथ की रचना के दौरान रविन्द्र नाथ अत्यन्त बीमार थे। अतः शान्ति निकेतन से इन्हें कलकत्ते ले जाया गया। इस दौरान उन्होंने जितनी कवितायें लिखी वे ही रोगशय्या के नाम से प्रकाशित की गई। स्वास्थ्य लाभ के बाद एवं शान्ति निकेतन में आने के बाद उन्होंने 'आरोग्य' की कवितायें लिखी। यह ग्रंथ प्रकाशित हुआ ई0 सं0 1941 में। इसमें संग्रहित कविताओं का विषय अनेक हैं। कुछ कविताओं में रविन्द्र नाथ जी की शारीरिक–मानसिक अवस्था का चित्रण है। प्रकृति से प्रेम, धरती से प्रेम का वर्णन भी है। साथ ही धरती व प्रकृति के बीच रहने वाले मानव की चिन्ता भी गुरुदेव ने की है। जीवन के इन दिनों रविन्द्र जी ने उस परम सत्ता में विलीन होने की बात भी की है। यह बोध उनको हुआ है कि उस आनन्दमय, अमृतमय, ज्योर्तिमय परम सत्ता और उनमें कोई भेद नही। आरोग्य की 32 संख्यक कविता में इसी भाव का उल्लेख इस प्रकार हुआ है–

''परम आमिर साथे युक्त हते पारि

विचित्र जगते

प्रवेश लभिते पारि आनंदेर पथे''

(आरोग्य– 32)[10]

रविन्द्र नाथ जी के जीवन काल में प्रकाशित अन्तिम काव्य रचना थी 'जन्मदिने' जो 'आरोग्य' के पश्चात् ई0 सं0 1941 मई में प्रकाशित हुई। इस ग्रंथ की अनेक कविताओं में इस संसार से विदा लेने की बात अभिव्यक्त है। 'जन्मदिन' की 'मृत्युदिन' में परिणीत हो जाने की अनुभूति रवीन्द्र नाथ ने की है। 'अब मैं चला' इस भाव की व्याप्ति है। रविन्द्र नाथ जी के निधन के पश्चात् कुछ काव्य रचनायें प्रकाशित हुई जिनमें – 'छड़ा', 'शेष लेखा', 'बैकाली' और 'चित्रविचित्र' प्रमुख है। शेषलेखा में उनके द्वारा लिखी गई समस्त अंतिम कवितायें हैं। ग्रंथ का नामकरण भी संकलनकर्ता द्वारा की गई है। इस ग्रंथ में 15 कवितायें हैं। कुछ कवितायें गान रूप में भी प्रसिद्ध हैं। शेषलेखा में उन्होंने जो कहा है उसका मर्म यही है कि यह अनेक रूपात्मक जगत स्वप्न माया नही है। रविन्द्र नाथ जी कहते हैं कि सत्य तो कठिन है मगर इस कठिन को ही मैने प्रेम किया है क्योकि सत्य कभी वंचना नही करता। शेषलेखा की इस संदर्भ में कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं–

''सत्य ये कठिन
कठिनेरे भालोबासिलाम
से करवनो करे ना वंचना।''

(शेष लेखा 11)[11]

'बैकाली' का प्रकाशन ई0 सं0 1951 में किया गया। इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि यह रविन्द्रनाथ की हस्तलिपि में छपा है।

इसी प्रकार 'चित्र–विचित्र' का प्रकाशन ई0 सं0 1954 में हुआ। यह काव्य संग्रह बालोपयोगी है। साथ ही सरल, मनोरंजक एवं बालकों के लिये आनन्दप्रद हैं।

गुरू रविन्द्र नाथ जी के पूरे जीवन की इस साहित्य यात्रा ने उन्हें 'विश्व कवि रविन्द्रनाथ' बनाया। उनके काव्यों में उनका जीवनदर्शन, विश्व दर्शन, समाज दर्शन, मानव दर्शन व प्रकृति दर्शन स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। उनके सम्पूर्ण काव्य में मुख्य रूप से प्रकृति, मानव व अध्यात्म सत्ता, विषय रूप में ग्रहण किये गये हैं।

'शेषलेखा' की कुछ पक्तियाँ जो यहाँ दी जा रही है उनसे रविन्द्र नाथ जी के अन्तिम जीवन की अभिव्यक्ति अनुभूत होती है–

''प्रतिदानें यदि किछु पाई
किछु स्नेह किछु क्षमा
तबे ताहा संगे निये याई
पारेर खेयाय याब यबे
भाषाहीन शेषेर उत्सवे।''

(शेष लेखा –10)[12]

सम्पूर्ण जीवन में लिखी काव्य रचनाओं में रविन्दनाथ टैगोर जी की सबसे लोकप्रिय रचना 'गीतांजलि' है। इस काव्य रचना ने रविन्द्र नाथ को विश्व के श्रेष्ठ कवियों, एक रचनाकारों में स्थापित किया। जीवन की अनुभूतियों, प्राकृतिक सौन्दर्य इत्यादि का वर्णन साहित्य प्रेमी को भावों से भर देता है। नवम्बर 1912 में 'इण्डिया सोसाइटी ऑफ लन्दन' ने गीताजंलि का प्रथम अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित किया। इसका अंग्रेजी अनुवाद रविन्द्र नाथ टैगोर के मित्र रोथेस्टोन ने लिखी तथा अंग्रेजी के सुप्रसिद्ध कवि यीट्स ने इसकी प्रस्तावना लिखी। अंग्रेजी कवियों, रचनाकारों ने भी गीताजंली को विश्व की सर्वश्रेष्ठ कृति बताया। देश–विदेश में इसकी समीक्षा प्रकाशित हुई। अतंतः गीताजंली को नोबेल पुरस्कार के लिए चुना गया। रविन्द्र नाथ टैगोर सबसे पहले भारतीय तथा एशियाई थे जिन्हें नोबल पुरस्कार (1913) के लिए चुना गया। इसी

समय स्वाधीनता आन्दोलन की लड़ाई भी चल रही थी। रविन्द्र नाथ टैगोर ने साहित्य के माध्यम से स्वाधीनता आन्दोलन को प्रेरित किया। उन्होंने अपनी कविताओं एवं कहानियों के माध्यम से जन–जन को राष्ट्रीयता का संदेश दिया। वास्तव में वे सच्चे राष्ट्र कवि थे। शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्होंने अभूतपूर्व कार्य किया। उन्होंने शान्ति निकेतन विश्वविद्यालय तथा विश्वभारती नामक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के शिक्षण संस्थानों की स्थापना की। इन विद्यालयों के निर्माण में उन्होंने अपनी सारी पूँजी लगा दी। शिक्षा व संस्कृति को जोड़कर चलने का उनका आग्रह था। व्यक्तित्व निर्माण का बेहतर विकल्प वे शिक्षा को समझते थे। उन्हें भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली (गुरू–शिष्य परम्परा) से लगाव था और इसी उद्देश्य से शान्ति निकेतन का निर्माण किया था। आधुनिक छात्रों में वे प्राचीन शिक्षा के मूल्यों को उतारना चाहते थे।

श्री बी0एस0 नरवाने ने अपनी पुस्तक– **An introduction to Rabindra Nath Tagore में लिखा है कि "Ravindra Nath built Shantiniketan into a unique institution which while fully attained to the imposition spirit of the moderns age, retained the fundamental values of ancient education."**[13]

रविन्द्र नाथ टैगोर ने अपना बाकी जीवन शिक्षा देने के लिए व्यतीत किया। विश्व भारती विश्वविद्यालय विश्व भर में अपनी विशिष्ट शिक्षण पद्धति के लिए विख्यात थी। देश–विदेश के विद्यार्थी यहाँ अध्ययन के लिए आते थे। ऐसे विश्वविद्यालय को प्रचुर धन की भी आवश्यकता रहती थी। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उन्होंने सोचा कि देश का भ्रमण कर धन इकट्ठा किया जावें। अतः उन्होंने भ्रमण करना आरम्भ किया। जब वे उत्तर भारत में थे तो इस बात की जानकारी महात्मा गाँधी जी को हुई। उन्होंने नेहरू जी से कहा कि गुरूदेव के लिए इतना धन इकट्ठा कर दो कि उन्हें देश–देश भटकना ना पड़े और नेहरू जी ने यह काम किया, उन्होंने एक बड़ी धनराशि रविन्द्र नाथ को भेंट की।

रविन्द्र नाथ मनुष्य की जीवनधारा में पूर्ण आस्था रखते थे। वे विशुद्ध मानवता के गीत गाते रहे। यद्यपि विदेशी तत्वों को भी उन्होंने अपनाया है परन्तु ऐसा करते समय भी वे मूल रूप से भारतीय पृष्ठभूमि, उसकी आत्मा से जुड़े रहे। उनके पाँव हमेशा भारत भूमि पर ही रहे। रविन्द्र नाथ में कर्म पुरूष और भाव पुरूष का अद्भूत मेल था। वे भारतीय संस्कृति के प्रबल समर्थक व वाहक थे एवं भारतीय संस्कृति के अर्न्तपक्ष के संरक्षक थे। इसी भावना का प्रतिफल था– शान्ति निकेतन। इसके बारे में रविन्द्र नाथ ने कहा– ''भारत वर्ष की प्राचीन संस्कृति के लिए मेरा जो अनुराग है, उसकी अभिव्यक्ति हैं यह शान्ति निकेतन और मेरे देशवासी जो कोटि–कोटि नर–नारी हैं जो साल में एक दिन भी भरपेट खा नही पाते– उनके लिए मेरे हृदय में जो वेदना है, उसकी अभिव्यक्ति होगी यह श्री निकेतन[14]।

श्री रविन्द्र नाथ ने अपने को गायक भी कहा है– **''मैं एक गायक हूँ और उस गीत भंडार से जो संगीत प्रवाहित होता है, उसकी ओर मैं सदैव आकृष्ट रहता हूँ।''**[15]

रविन्द्र नाथ गायक भी हैं, इसकी सार्थकता 'रविन्द्र संगीत' में देखी गई जो शायद उनके उसी गीत भंडार से निकला है।

रविन्द्र नाथ के लिए भारत की एकता एक सामाजिक सच्चाई थी। उनके लिए भारत की संकल्पना भू–भागीय नहीं थी, विचारात्मक थी। उनका वैचारिक आदर्श सामाजिक स्तर पर प्रतिष्ठित था, जिसकों भारत के भक्त कवियों नानक, कबीर, चैतन्य इत्यादि ने अपने आदर्शो से संजोया था। वे मानवतावाद के पक्षधर थे। मानवीय एकता उनके जीवन का मूलस्वर था। सम्पूर्ण विश्व के साथ एकमेक होना, सबकी सुख

शान्ति के बारें में सोचना, भारत की सभ्यता का एक महत्वपूर्ण मूल्य तत्व है। सन् 1909–10 में प्रकाशित गोरा उपन्यास के नायक के स्वर में उनके मन में संजोया हुआ स्वाधीनता व मानवीय एकता का स्वर प्रकट हुआ है–

''मेरे लिये मेरे देश से बड़ा कुछ नही
समग्र भारत का दुःख–सुख
ज्ञान–अज्ञान से मैं परे नही हूँ
मैं आज भारत वर्षीय हूँ
मेरे भीतर हिन्दू मुसलमान बसे
हुये हैं– भारत की सारी जाति मेरी जाति है।'' [16]

शान्ति निकेतन की स्थापना उनके उच्च विचारों व आदर्शो के अनुरुप की गई थी। वे ऐसी शिक्षा चाहते थे जिससे लोगों के बीच का मतभेद, अंतराल मिट जाये। उनका यह कहना था कि मात्र राजनैतिक स्वाधीनता से काम नही चलेगा जबकि आपस में भाषा, जाति, क्षेत्र व धर्म को लेकर इतनी असमानता, इतना अलगावपन है।

रविन्द्र नाथ टैगोर एक विशिष्ट काव्य, कला व संस्कृति के उपासक थे। अपनी रचनात्मक भावनाओ से उन्होंने समाज में व्याप्त असमानताओं को दूर करने का प्रयास किया। वे समस्त धर्मो, जातियों, भाषाओं व संस्कृतियों को एक मानकर चलते थे। ताकि इससे सम्पूर्ण राष्ट्र एक सूत्र में बंधा रहें। बंगला साहित्य के माध्यम से भारतीय सांस्कृतिक चेतना में प्राण डालने वाले युग दृष्टा थे। वे ऐसे एकमात्र कवि हैं जिसकी दो रचनायें दो देशों का राष्ट्रगान बनी। भारत का राष्ट्रगान ''जन–गण–मन'' और बंगलादेश का राष्ट्रीयगान 'आमार सोनार बंगला' गुरूदेव की ही रचनायें हैं। रविन्द्र जी ने करीब 2230 गीतों की रचना की। रविन्द्र संगीत बंग्ला संस्कृति का अभिन्न अंग है। टैगोर के संगीत को उनके साहित्य से अलग नही किया जा सकता। ये गीत मानवीय भावनाओं के विभिन्न रंगों को प्रस्तुत करते हैं।

अन्तिम दिनों में वे शान्ति निकेतन में रहकर साहित्य साधना व आध्यात्मिक साधना करते रहे। जीवन के आखिरी कुछ वर्षो 1933–1940 तक का समय साहित्य रचना, शिक्षण कार्य तथा समाज सेवा में व्यतीत किया। करीब 80 वर्ष की आयु के पश्चात् सन् 1941 में इस युगदृष्टा, युगस्रष्टा महानायक का देहान्त हो गया।

रविन्द्र नाथ टैगोर जी ने अपनी साहित्यिक रचनाओं से इस समाज को जितना समृद्ध किया अपने व्यक्तिगत जीवन में उन्होंने उतना ही खाली अपने आप को पाया। अल्पायु में ही उनकी पत्नी की मृत्यु हो गयी थी। तीन बेटियाँ व दो बेटे रविन्द्र नाथ को थे। परन्तु नियति ने रविन्द्र नाथ का साथ नही दिया। दोनो बेटे एक–एक कर मौत के मुँह में चले गये। छोटी बेटी रेणुका टी0वी0 की बिमारी से चल बसी। कुछ दिनों बाद उनकी बड़ी बेटी माधुरी लता भी टी0वी0 से ग्रसित हो गई और चल बसी।

जीवन ने रविन्द्र नाथ टैगोर को अनेक दंश दिये। इन दुःखों, पीड़ाओं की अनुभूति रविन्द्र नाथ के साहित्य में भी मिलती है। रविन्द्र नाथ टैगोर की मृत्यु 7 अगस्त 1941 को हुई। इससे 11 दिन पहले यानि 27 जुलाई को एक कविता लिखी जिसका कुछ अंश इस प्रकार है–

''पहले दिन के सूर्य ने
प्रश्न किया था सत्ता के नये आर्विभाव को
कौन हो तुम
उत्तर नही मिला
साल दर साल दिन बीत गये
दिवस के अन्तिम सूर्य ने
अन्तिम दफा पूछा

पश्चिम सागर के किनारे से

साँझ की निश्तब्धता में

कौन हो तुम

उत्तर नही मिला।"[17]

रविन्द्र नाथ टैगोर को आज सम्पूर्ण विश्व उनकी 150वीं जन्मशती पर शत्–शत् नमन करता है एवं अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

संदर्भ–ग्रंथ

1. रविन्द्र साहित्य की समीक्षा– लेखक शिवनाथ, पृ0 सं0 9–10।
2. अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त भारतीय साहित्यकार –लेखक ए0पी0 कमल, पृ0 सं0 13।
3. वही पृ0 सं0 16।
4. रवीन्द्र साहित्य की समीक्षा–लेखक शिवनाथ ,पृ.सं.1।
5. वही, पृ0 10।
6. वही ,पृ0 से 11।
7. वही, पृ0 सं0 –16–17।
8. वहीं , पृ0सं0–56।
9. वहीं , पृ0 सं0 57।
10. वहीं, पृ0 सं0 125।
11. वही, पृ0 सं0 134।
12. वही, पृ0 सं0 135।
13. अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त साहित्यकार–लेखक एम0पी0 कमल, पृ0सं0 36।
14. रवीन्द्र साहित्य की समीक्षा–लेखक श्री शिवनाथ ,पृ0सं0 332।
15. रविन्द्र साहित्य की समीक्षा– शिवनाथ, लेख– आनन्द की आस्था, पृ0सं0 278, (मुख्य स्रोत– I am a singer myself and I am ever attrected by the strains that come forth from the house of songs. - The riligion of man. page- 88, george Allen and unwin, london 1949).
16. हिन्दुस्तानी जबान, अंक–जुलाई–सितम्बर 2011 लेख प्रो0 इन्दूनाथ चौधरी, पृ0 10।
17. वही, पृ0 सं0 8 महात्मा गांधी मेमोरियल, रिसर्च सेन्टर, मुम्बई की शोध पत्रिका, हिन्दुस्तानी प्रचार सभा द्वारा संचालित।